तिथि
6.5.2020

TOPIC SL. No.
शीर्षक क्रम सं० (54)

स्नातक द्वितीय वर्ष
राष्ट्र भाषा - 100 अंक
R.B Hindi - 100 marks
DII

दिनकर की 'उर्वशी' - प्रतिपाद्य

'उर्वशी' महाकवि दिनकर की महत्वपूर्ण काव्य-रचना है; जिसमें कवि ने उर्वशी-पुरूरवा के प्राचीन आख्यान को नई दृष्टि, नूतन भावभूमि एवं आधुनिक विचारधारा से समन्वित करके प्रस्तुत किया गया है। उर्वशी एवं पुरूरवा के प्रेमाख्यान को भारत का ही नहीं विश्व का भी प्राचीनतम उपलब्ध प्रेमाख्यान कहा जा सकता है, क्योंकि इसका निरूपण सर्वप्रथम ऋग्वेद के दसवें मंडल में हुआ है तथा ऋग्वेद को विश्व के उपलब्ध ग्रंथों में प्राचीनतम माना जाता है। ऋग्वेद के अनंतर शतपथ ब्राह्मण पौराणिक ग्रंथों एवं कालिदास के 'विक्रमोर्वशीय' में भी इस आख्यान का निरूपण विभिन्न रूपों में हुआ है।

मानव-संस्कृति के भावी विकास की दृष्टि से काम या प्रेम का कौन-सा रूप ग्राह्य - इस संबंध में आज के मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्री एवं दार्शनिक एक मत नहीं हैं। अतः कहना चाहिए कि 'काम' का कौन-सा रूप ग्राह्य है - यह प्रश्न आज के मनुष्य की एक अत्यंत महत्वपूर्ण समस्या है, एक 'सार्वभौम' समस्या है, जिसे कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने काव्यात्मक माध्यम से प्रस्तुत

Scanned with CamScanner

करते हुए इसके सभी पक्षों को प्रतिनिधित्व प्रदान किया है। सर्वप्रथम उर्वशी के द्वारा प्रस्तुत पक्ष को ही लेते हैं-

उर्वशी 'काम' या 'प्रेम' के जिस पक्ष को प्रस्तुत करती है उसे संक्षेप में 'स्वच्छंद-प्रेम' की संज्ञा दी जा सकती है। भारतीय पुराणों के अनुसार उर्वशी स्वर्ग की अप्सरा थी, तथा अप्सराओं के लिए किसी व्यक्ति से स्थायी संबंध रखना आवश्यक नहीं है। इसलिए वे न तो किसी एक व्यक्ति की पत्नी बनती हैं और न ही वे विवाह एंव दांपत्य का बंधन स्वीकार करती हैं। यह बात न केवल उर्वशी पर ही नहीं, रंभा, मेनका, सहजन्या आदि अप्सराएँ भी प्रेम के इसी रूप का प्रतिपक्ष करती हुई दिखाई पड़ती हैं। रंभा इसकी स्पष्ट व्याख्या इन शब्दों में करती हुई दिखाई पड़ती है-

' x x x

प्रेम मानवी की निधि है, अपनी तो वह क्रीड़ा है।"

x x x

इस स्वच्छंद प्रेम में नर-नारी किसी किसी एक से ही संबोधित नहीं रहते अर्थात् वह स्थिर भावात्मक संबंध एंव विवाह-संबंध को स्वीकार नहीं करता।

उर्वशी प्रकृति और परमेश्वर, पाप और पुण्य, स्वर्ग और मुक्ति के संबंध में अपनी धारणाएँ व्यक्त करती है। जो व्यक्ति उसके विचारानुसार प्रकृति से परे या अलग ईश्वर नहीं है - दूसरे शब्दों में भौतिक

Scanned with CamScanner

जगत ही ईश्वर है। जो व्यक्ति प्रकृति या भौतिक जगत के नियम स्वीकार करता है वह एक प्रकार से ईश्वर के आदेशों को भी स्वीकार करता है। पाप-पुण्य, नीति-अनीति के विचार मनुष्य की वासना-पूर्ति के मार्ग में बाधा उपस्थित करते हैं। - अतः इन्हें वह बुद्धि के द्वारा स्थापित व्यर्थ के बंधनों के रूप में घोषित करती है। 'मुक्ति' से भी उसका आशय आत्मा की मुक्ति से नहीं अपितु विवेक-बुद्धि द्वारा आरोपित विधि-निषेध के बंधनों से मुक्ति है।

उर्वशी ने अपने इस दर्शन को 'कामधर्म' की संज्ञा दी है। वस्तुतः यह कामधर्म इतना संकीर्ण और सीमित है कि उसका संबंध केवल शरीर से है, हृदय और मन की भी वह उपेक्षा कर देता है। इतना ही नहीं, वह तो यह भी स्वीकार करती है कि तन के काम-धर्म में सारे दोष मन के कारण ही उत्पन्न होते हैं। अतः उसके शब्दों में -

"तन का काम अमृत, लेकिन यह मन का काम गरल है।"

मैं प्रस्तुत हुआ हूँ तथा आज के अनेक क्षणवादी भोग-लोलुप व्यक्ति इसका समर्थन भी करेंगे किन्तु इसकी सीमा वर्तमान तक ही सीमित है। इसका

Scanned with CamScanner

जो मूल्य मानव को चुकाना पड़ेगा वह बहुत भारी होगा। यह क्षणिक भोगवाद मानव-सभ्यता को अराजकता, अव्यवस्था, निराशा एवं नाश की स्थिति तक पहुँचाकर उसे शीघ्र ही जड़ प्रकृति का अंग बना देगा - इनमें कोई संदेह नहीं।

काम या प्रेम के दूसरे रूप का प्रतिनिधित्व पुरुरवा के द्वारा होता है। प्रेम के इस रूप में शारीरिक संबंधों या यौन-संबंधों की सर्वथा उपेक्षा तो नहीं की जाती, किन्तु यही उसका चरम लक्ष्य नहीं होता। इसमें प्रणय-संबंध का सूत्रपात भले ही काम-वासना एवं सौंदर्य-लालसा से हो, किंतु वह वहीं तक स्थिर नहीं रहता अपितु उससे ऊपर उठकर क्रमशः शरीर से मन एवं मन से आत्मा के स्तर तक पहुँचने का प्रयास करता है। साथ ही पुरुरवा का एक मंतव्य यह है कि वह केवल उर्वशी के शरीर का ही नहीं उसके हृदय का भी इच्छुक था। शरीर, भिक्षा या अपहरण के द्वारा भी प्राप्त हो सकता है, किन्तु प्रेम उससे संभव नहीं। -

"..... क्षत्रिय भी भीख माँगते हैं क्या ?
और प्रेम क्या कभी प्राप्त होता है भिक्षाटन से ?"

प्रेम की महिमा, सत्यता एवं दृढ़ता की शक्ति में उसे पूरा विश्वास है। 'जाकर जेहि पर सत्य सनेहू, सो तेहि मिलहि न कछु संदेहु' में उसकी पूरी आस्था है।

Scanned with CamScanner

इसीलिए जिस तत्व दर्शन को हम उर्वशी के संदर्भ में 'काम-दर्शन' कहते हैं, उसी को पुरुरवा के संदर्भ में 'प्रेम-दर्शन' कहा जा सकता है। किसी परम सत्ता के प्रति आस्था, उसके विराट् रूप की अनुभूति उसे यह स्मरण कराए बिना नहीं रहती कि उर्वशी का सौंदर्य ही सब कुछ नहीं है, उससे परे भी है, उससे भी अधिक व्यापक कोई सौंदर्य है। उर्वशी का सौंदर्य तो उस विराट् सौंदर्य का एक अंश मात्र है।

मानव-सभ्यता के आदिकाल में नारी-पुरुष का संबंध बहुत कुछ काम और सौंदर्य की प्रेरणाओं पर ही आधारित रहा होगा - ऐसा स्वीकार किया जा सकता है, किन्तु सभ्यता के विकास के साथ-साथ ज्यों-ज्यों विवाह, परिवार एवं समाज की विभिन्न इकाईयों का संगठन व विकास होता गया त्यों-त्यों स्त्री-पुरुष के यौन-संबंध भी वैवाहिक नियमों व विधि-विधानों से अनुशासित होते गये। 'उर्वशी' में चित्रित प्रेम के शेष दो रूप इसी वैवाहिक रूप की दो भिन्न-भिन्न स्थितियों के सूचक हैं। पहली स्थिति 'पातिव्रत्य धर्म' की सूचक है, जिसमें नारी के लिए पति के सभी गुण-दोषों को स्वीकार कर उसे परमेश्वर तक मानना आवश्यक है। इसका प्रतिनिधित्व पुरुरवा की पत्नी औशीनरी करती है। वह अपना तन, मन, धन, जीवन - सब कुछ पूर्ण भाव से पति को समर्पित कर देती है, किन्तु फिर भी पति के

तन और मन पर उसका कोई अधिकार नहीं। अपना सब कुछ देकर पति के एकमात्र प्रेम के लिए भी वह भिक्षुणी बनी रहती है।

दांपत्य जीवन का एक संतुलित एवं आदर्श रूप च्यवन ऋषि एवं उनकी पत्नी सुकन्या के द्वारा प्रस्तुत हुआ है। च्यवन जहाँ अपनी पत्नी को अपनी समस्त साधना, उपलब्धि, ईश्वर के द्वारा दी गई सिद्धि के रूप में स्वीकार करते हुए उसे अपने जीवन में सर्वोपरि स्थान प्रदान करते हैं; वहीं वहाँ उनकी पत्नी सुकन्या भी अपने पति को अपने 'परम आराध्य देव' के रूप में स्वीकार करती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि दिनकर ने प्रेम के विविध रूपों की तुलनात्मक व्याख्या प्रस्तुत करते हुए भी अंततः इसी रूप को च्यवन एवं सुकन्या द्वारा प्रस्तुत रूप का ही अनुमोदन किया है।

डॉ० आरती प्रसाद
सह प्राचार्य, हिन्दी-विभाग
रामनारायण महाविद्यालय,
पण्डौल, मधुबनी
मो०नं०-9955839892

Scanned with CamScanner